शोध मंथन Vol. XVII No.2 Apr.- June. 2026 ISSN: (P) 0976-5255 (e) 2454-339X, Impact Factor 8.889 (SJIF)
https://doi.org/10.31995/shodhmanthan.2026.v17i02.026

संस्कृत साहित्य में कालिदास की कृतियों में गंगा नदी का महत्व

प्राप्तिः 25.04.2026
स्वीकृतः 05.06.2026

26

प्रो प्राची शास्त्री
(भूगोल विभाग)
सेठ आर एल सहरिया
राजकीय महाविद्यालय, कालाडेरा
ईमेलः *prachishastri14@gmail.com*

डॉ निमिष गुप्ता
सह आचार्य
व्यावसायिक प्रशासन विभाग
राजकीय महाविद्यालय
देवली, टोंक

सारांश

भारतीय मानस में गंगा नदी का महत्त्व स्थान एवं कालजयी है। गंगा नदी का सामाजिक, आर्थिक, पर्यावरणीय, धार्मिक एवं सांस्कृतिक महत्त्व अप्रतिम है। इस महत्त्व को साहित्य जगत ने भी उन्मुक्त उदय से स्वीकार किया है। प्रस्तुत शोध पत्र में इसी अनंत कडी में संस्कृत साहित्य के साहित्यकार एवं काव्यकार कालिदास की दृष्टि एवं विभिन्न कृतियों में किए गए वर्णन को एकत्रित कर वर्तमान परिदृश्य में विश्लेषित करने का प्रयास किया गया है।

प्रस्तावना

भारतवासियों की जन– जन की आस्था एवं श्रृद्धा की केन्द्र पतित पावनी पुण्य सलिला गंगा का सभी भारतीय नदियों में महत्त्वपूर्ण स्थान है। यही कारण है कि भारतीय संस्कृति के व्याख्याता काव्यकार कालिदास ने अपने काव्यों में गंगा के प्रति असीम श्रृद्धा एवं आस्था व्यक्त की है। गंगा का उल्लेख हमारे प्राचीनतम वैदिक साहित्य ऋग्वेद[1] शतपथ ब्राह्मण[2] जैमिनि ब्राह्मण,[3] तैत्तिरीय आरण्यक[4] के साथ–साथ वाल्मीकि रामायण[5] आदि में भी उपलब्ध होता है तथा महाभारत में भी इसकी पवित्रता एवं महिमा का पर्याप्त वर्णन हुआ है।[6]

नाटककार कालिदास ने जहाँ केवल दो स्थलों[7] पर गंगा की धारा का सामान्य रूप से मात्र उपमान रूप में प्रयोग किया है, वहीं दूसरी ओर काव्यकार ने अपनी तीनों ही कृतियों में गंगा के प्रति अगाध श्रृद्धा भाव को अपने अन्तस्तल से अद्भुत अभिव्यक्ति प्रदान की है। यहाँ तक कि अपनी सर्वश्रेष्ठ कृति रघुवंश महाकाव्य में एक स्थल[8] पर तो उनका यहाँ तक मानना है कि तत्त्वज्ञानी न होने पर भी गंगा–यमुना के संगम में स्नान करने से व्यक्ति को सांसारिक बन्धनों से मुक्ति प्राप्त हो जाती है।

उन्होंने इसके जह्नु कन्या अथवा जाह्नवी[9] भागीरथी,[10] गंगा[11] आदि विशेषणों का अत्यन्त श्रृद्धा भक्ति के साथ प्रयोग किया है। इतना ही नहीं हम देखते हैं कि काव्यकार अपने प्रथम महाकाव्य कुमार सम्भव में स्वर्ग गंगा मन्दाकिनी के भागीरथी,[12] शिव की जलमयी मूर्ति,[13] सुरापगा,[14] स्वर्ग

तरंगिणी,[15] स्वर्धुन[16] गंगा,[17] व्योमवाहिनी,[18] स्वर्गापगा,[19] त्रिदशापगा,[20] सुरस्रवन्ती,[21] नाक नदी[22] तथा सुर निम्नगा[23] आदि अनेक विशेषणों का प्रयोग करते हुए अत्यन्त भावभीनी स्तुति प्रस्तुत की है।

सूक्ष्म दृष्टि से विचार करने पर हम देखते हैं कि काव्यकार का नदियों और उनके संगम स्थलों के प्रति अत्यन्त लगाव रहा है, यही कारण है कि जहाँ नाटककार अपनी तीनों कृतियों में गोमती,[24] सिन्धु,[25] मालिनी,[26] वरदा[27] और मन्दाकिनी[28] आदि कुल पाँच–छः नदियों का केवल नामोल्लेख करते हैं। यद्यपि इनमें मालिनी नदी के तट पर महर्षि कण्व का आश्रम होने से कुछ अधिक वर्णन हुआ है, किन्तु यहाँ भी इस नदी के प्रति नाटककार की कोई विशेष श्रृद्धा भावना अभिव्यक्त नहीं हुई है। वस्तुतः ये सभी वर्णन प्राकृतिक सौन्दर्य आदि की अभिव्यक्ति के लिए ही प्रयुक्त हुए प्रतीत होते हैं।

इसके ठीक विपरीत काव्यकार कालिदास ने अकेले मेघदूत में ही सिन्धु,[29] चर्मण्वती,[30] वेत्रवती,[31] निर्विन्ध्या,[32] शिप्रा,[33] गन्धवती,[34] गम्भीरा,[35] रेवा,[36] सरस्वती[37] आदि लगभग नौ नदियों का उल्लेख करके अपने नदी विषयक प्रेम को अभिव्यक्ति प्रदान की है।

इसके अतिरिक्त अपनी सर्वश्रेष्ठ कृति रघुवंश महाकाव्य में उनकी गंगा के प्रति अगाध श्रृद्धा भक्ति भावना के साथ–साथ यमुना, सरयू आदि अन्य नदियों के प्रति भी भावाभिव्यक्ति दर्शनीय कही जा सकती है। इस प्रसंग में महत्त्वपूर्ण एवं उल्लेखनीय तथ्य यह भी है कि गंगा–सरयू संगम पर तो काव्यकार वस्तुतः मन्त्रमुग्ध ही प्रतीत होते हैं, क्योंकि अज की मुक्ति के लिए उन्होंने उसका देह त्याग भी गंगा सरयू के संगम पर ही कराया है–

तीर्थतोयव्यतिकरभवेजह्नुकन्या सरय्वोर्देहत्यागादमरगणनालेख्यमासाद्य सद्यः।
पूर्वाकाराधिकतररुचा संगतः कान्तयासौ लीलागारेश्वरमत पुनर्नन्दनाभ्यन्तरेशु।।[38]

यों तो गंगा सरयू दोनों ही नदियाँ काव्यकार की श्रृद्धास्पद रही हैं और इन दोनों का संगम तो फिर उनके लिए सोने में सुहागा ही हो जाता है। यही कारण है कि इन दोनों पवित्र नादियों के संगम पर शरीर त्याग करने के तुरन्त बाद अज देवता बनकर अपनी भार्या इन्दुमती के साथ नन्दन वन के विलास भवनों में विहार करने लगे, जो मृत्युलोक से स्वर्ग में आकर पहले से भी अधिक सुन्दर हो गयी थी।

यद्यपि गंगा, यमुना, सरयू इन तीनों नदियों के अतिरिक्त काव्यकार ने रघुवंश में सिन्धु,[39] शोण,[40] लौहित्य,[41] गोदावरी,[42] कावेरी,[43] ताम्रपर्णी,[44] मुरला,[45] कपिशा,[46] तमसा,[47] वंक्षु[48] आदि अनेक नदियों का उल्लेख भी किया है। इन सभी वर्णनों के आधार पर इतना अवश्य कहा जा सकता है कि काव्यकार कालिदास वृहत्तर भारत की विशालतम एवं लघुतम दोनों ही नदियों से पूर्णतया परिचित थे, जबकि इस विषय में नाटककार का ज्ञान हमें अत्यन्त सीमित प्रतीत होता है।

कहने का अभिप्राय यही है कि नाटककार की अपेक्षा काव्यकार का नदी विषयक ज्ञान एवं उनके प्रति लगाव अत्यधिक रहा है। यही कारण है कि अपने काव्यों में उन्होंने पर्वतीय प्रदेश की विषम चट्टानों में प्रवाहित होने वाली तुमुल ध्वनि करने वाली[49] मध्य प्रदेश एवं हिमालय की अनेकानेक नदियों का अत्यन्त सूक्ष्म रूप में मनभावन वर्णन किया है।

नदी प्रवाह से जुड़े हुए उनके सूक्ष्म वर्णनों में पर्वतीय अवरोध के कारण जल के स्तम्भित होने,[50] अवरूद्ध होने[51] आदि स्वाभाविक वर्णन विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं। इसके अतिरिक्त

https://doi.org/10.31995/shodhmanthan.2026.v17i02.026

काव्यकार इस वैज्ञानिक तथ्य से भी भली भाँति परिचित प्रतीत होते हैं कि बाढ़ युक्त सहायक नदी की धारा मुख्य नदी के प्रवाह में अवरोध उत्पन्न करती है।[52]साथ ही सभी प्रधान नदियाँ पर्वतों से निकलकर सागर में जाकर मिलती हैं।[53]

इसके ठीक विपरीत नाटककार ने, पर्वतीय अवरोध के कारण नदी का दो धाराओं में विभक्त होना,[54] विषम शिलाओं के अवरोध युक्त प्रवाह का वेग सौ गुना बढ़ जाना,[55] आदि केवल कुछ स्थलों पर ही इस विषय में अपने ज्ञान का परिचय प्रस्तुत किया है।

जैसा कि हम पूर्व में उल्लेख कर चुके हैं कि काव्यकार नदियों के साथ –साथ नदी संगम के प्रति भी विशेष प्रभावित रहे हैं, क्योंकि उन्होंने गंगा–सरयू संगम[56] के साथ–साथ गंगा–यमुना–संगम[57] एवं गंगा शोण संगम[58] का उल्लेख अपनी श्रेष्ठ कृति रघुवंश में किया है।

वस्तुतः काव्यकार का संगम एवं नदी विषयक यह प्रेम पृथक् से विवेचन का विषय है, अतः हमने यहाँ इसका संकेत भर किया है। प्रस्तुत प्रसंग में हमारा कथ्य केवल इतना है कि काव्यकार का यह गंगा विषयक प्रेम ही कहा जाएगा कि उन्होंने अपनी सर्व श्रेष्ठ कृति रघुवंश का प्रारम्भ ही महर्षि वसिष्ठ के आश्रम से किया है, जिसे गंगा प्रपात अपने शीतल जल कणों से पवित्र कर रहा है।[59]

इसी प्रकार अपनी प्रथम काव्य कृति कुमार सम्भव का आरम्भ ही वे जिस हिमालय की नगरी औषधि प्रस्थ से करते हैं, वह भी गंगा के किनारे ही स्थित है। जिसके चारों ओर गंगा की धाराएँ प्रवाहित हो रही हैं–

गंगास्रोतः परिक्षिप्तं वप्रान्तर्ज्वलितौषधिः।।[60]

इसी प्रकार मेघदूत की अलका नगरी का भी गंगा के तट पर स्थित होना काव्यकार के गंगा–विषयक उत्कट प्रेम एवं उसके प्रति अगाध आस्था तथा श्रद्धा का ही परिचायक कहा जा सकता है। इतना ही नहीं यहाँ तो काव्यकार ने गंगा की बहती धारा में कामिनी के शरीर से सरकती हुई साड़ी की अत्यन्त सुन्दर एवं मनभावन कल्पना भी की है–

तस्योत्संगे प्राणयिन इव स्रस्तगंगादुकूलां।[61]

इसके अतिरिक्त रघु की दिग्विजय के प्रसंग में भी काव्यकार ने हिमालय की चोटियों पर गंगा जी की फुहारों से युक्त शीतल वायु द्वारा ही अपने कथा नायक रघु की सेवा कराना उपयुक्त माना है–

गंगाशीकरिणो मार्गे मरुतस्तं सिशेविरे ।[62]

तत्पश्चात् इन्दुमती स्वयंवर के अवसर पर महिश्मती नगरी के राजा महा बाहु का वर्णन करते हुए उनकी रानियों के जल विहार के समय उनके स्तनों पर लगे चन्दन के जल में मिलने पर मथुरा की यमुना में भी गंगा की लहरों से संगम की कल्पना विशेषरूप से करना, काव्यकार के गंगा विषयक प्रेम को ही अभिव्यक्ति प्रदान करता है–

यस्यारोधस्तनचन्दनानां प्रक्षालनाद्वारिविहारकाले।
कलिन्दकन्या मथुरां गतापि गंगोर्मिसंसस्तजलेव भाति।[63]

इसी प्रकार अज और इन्दुमती के मिलन की उपमा के लिए काव्यकार को गंगा के समुद्र में मिलन रूप उपमान का चयन करना ही अधिक संगत एवं प्रभावी प्रतीत हुआ है, जो उनके गंगा विषयक प्रेम का ही परिचायक है–

शशिनमुपगतेयं कौमुदी मेघमुक्तं जलधिनिमनुरूपं जह्नुकन्यावतीर्णा ।[64]

इसके पश्चात् इन्दुमती की रक्षा के लिए राजाओं की सेना को रोककर खड़े होने के लिए बाढ़ के दिनों में ऊँची तरंगों वाले शोण नद द्वारा गंगा की धारा को रोकने रूप उपमान का प्रयोग, जहाँ एक ओर काव्यकार के उपमा वैशिष्ट्य को प्रदर्शित करता है, वहीं दूसरी ओर उनके गंगा विषयक प्रेम को भी अभिव्यक्ति प्रदान करने वाला है–

प्रत्यग्रहीत् पार्थिवाहिनीं तां भगीरथीं शोण इवोत्तरंगः।[65]

इसी प्रकार इसी महाकाव्य में अन्यत्र विष्णु की स्तुति करते हुए काव्यकार अलग–अलग शास्त्रों में अलग–अलग रूप में बताए गए मार्ग एक ही परमपिता विष्णु तक पहुँचते हैं, इस कथ्य को समझाने के लिए भी वे गंगा की सभी धाराओं के समुद्र में गिरने के उदाहरण का ही चयन करते हैं–

बहुधाप्यागमैर्भिन्ना पन्थानः सिद्धहेतवः।
त्वय्येव निपनन्त्योध जाह्नवीया इवार्णवे।[66]

इन सबसे महत्त्व पूर्ण गंगा के प्रति काव्यकार की श्रद्धा के भाव की प्रबल अभिव्यक्ति दशम सर्ग में उस अवसर पर होती है, जब वे प्रसव के उपरान्त दुबली कौसल्या के पास लेटे हुए नन्हें राम की उपमा के लिए शरद् ऋतु में पतली धार वाली गंगा के तट पर चढ़ाए हुए नील कमल का उपमान रूप में प्रयोग करके सहृदय को चमत्कृत कर देते हैं–

शय्यागतेन रामेण माता शातोदरी बभौ।
सैकताम्भोजबलिना जाह्नवीव शरत्कृशा।।[67]

तत्पश्चात् रघुवंश के त्रयोदश सर्ग में गंगा यमुना को समुद्र की दो पत्नियाँ बताते हुए आठ श्लोकों में प्रबल भावाभिव्यक्ति हुई है।[68] काव्यकार का मानना है कि अत्रि की पत्नी अनसूया ही, ऋषियों के स्नान के लिए त्रिपथगा गंगा को यहाँ लेकर आयीं हैं। जिसमें सप्तर्षि गण पूजा के लिए स्वर्ण कमल चुनते हैं, यही त्रिपथगा शिव के सिर पर माला की सी शोभा को धारण करती है, वस्तुतः सुन्दर कल्पना कही जा सकती है।[69]

पुनः गंगा–यमुना संगम का भाव विभोर कर देने वाला वर्णन करते हुए काव्यकार अनेक उत्प्रेक्षाओं की मानो झड़ी ही लगा देते हैं, जो उनके गंगा विषयक प्रेम के संकेतक रहे हैं। इस प्रसंग में उपमानों की परिकल्पना काव्यकार की नव नवोन्मेषिणी प्रतिभा को भी प्रदर्शित करती है। यहाँ यमुना की साँवली लहरों में मिली हुई उजली लहरों वाली गंगा की सुन्दरता की अभिव्यक्ति के लिए इन्द्रनील मणियों से गुथी माला, नीले और श्वेत कमलों की मिली माला[70] का उपमान रूप में प्रयोग दर्शनीय कहा जा सकता है।

पुनः इस उपमान से संतुष्ट न होकर काव्यकार अग्रिम श्लोकों में साँवले रंग के हंसों से मिले हुए उजले रंग के राजहंसों की पंक्ति का उपमान रूप में प्रयोग करते हैं। तत्पश्चात् इसी प्रसंग में श्वेत चन्दन से चीती हुई पृथ्वी को बीच–बीच में काले अगरु द्वारा चीती हुई बताते हैं।[71] इतना ही नहीं इस सबसे आगे बढ़कर वे गंगा–यमुना के संगम की शोभा को वृक्ष के नीचे की उस चाँदनी के समान बताते हैं, जिसके बीच–बीच में पत्तों की छाया पड़ी हो अथवा शरद् ऋतु के उजले बादलों के समान कहते हैं, जिनके बीच में से नीला आकाश झाँक रहा हो।[72] इसके अतिरिक्त कहीं तो भाव

https://doi.org/10.31995/shodhmanthan.2026.v17i02.026

विभोर कर देने वाला यह दृश्य काव्यकार को भस्म पुते हुए शिव के शरीर के समान प्रतीत होता है, जिस पर काले सर्प लिपटे हुए हैं।[73]

कहने का अभिप्राय यही है कि प्रस्तुत स्थल पर गंगा–यमुना संगम के दृश्य का वर्णन करते हुए काव्यकार वस्तुतः अपने श्रद्धातिरेक के कारण अत्यन्त भावुक हो गए हैं, इसलिए स्वयं को वे मानो संगम के इस दृश्य पर न्यौछावर ही कर देना चाहते हैं। तभी तो वे गंगा–यमुना संगम को लेकर एक के बाद एक उपमान प्रस्तुत करते हुए उपमानों की माला ही प्रस्तुत कर देते हैं।

इतना ही नहीं काव्यकार ने तो संगम स्नान को तत्त्व ज्ञान से भी अधिक महत्ता प्रदान की है, क्योंकि इस विषय में उनकी मान्यता है कि गंगा–यमुना के पवित्र संगम में स्नान करने वाला व्यक्ति तत्त्वज्ञानी न होते हुए भी सांसारिक बन्धनों से पूर्णतया मुक्त होकर मोक्ष गामी हो जाता है।[74]

वस्तुस्थिति तो यह है कि काव्य संरचना करते हुए काव्यकार प्रतिक्षण ऐसे अवसरों की तलाश में रहते हैं कि उन्हें गंगा के वर्णन का अवसर प्राप्त हो। इसीलिए जैसे ही उन्हें अवसर प्राप्त होता है वे गंगा का उपमान रूप में अथवा उदाहरण रूप में नियोजन करने से नहीं चूकते हैं। रघुवंश के चतुर्दश सर्ग में राम लक्ष्मण के वनवास से लौटने पर उनकी माताओं के साथ मिलन के दृश्य में भी वे गंगा का ही उपमान रूप में प्रयोग करते हैं।

क्योंकि राम लक्ष्मण को देखकर दोनों माताओं की आँखों में आए आनन्द के ठंडे आँसुओं ने शोक के गर्म आँसुओं को वैसे ही ठंडा कर दिया, जैसे गर्मी के दिनों में हिमालय का शीतल जल गंगा और सरयू के गर्म जलों को ठंडा कर देता है।[75] प्रस्तुत सुन्दर अभिव्यक्ति वस्तुतः काव्यकार के गंगा विषयक प्रेम को ही अभिव्यक्ति प्रदान करता प्रतीत होता है।

इसके अतिरिक्त काव्यकार ने गंगा को ममता मयी माँ के रूप में चित्रित करके उसके प्रति आपनी आस्था एवं श्रृद्धा के सुमन अर्पित किए हैं। रघुवंश महाकाव्य में राम की आज्ञा से माता सीता को गंगा तट पर स्थित वन में छोड़ने के लिए जाते हुए मार्ग में पड़ी गंगा मानो लक्ष्मण को अपने लहरों रूपी हाथों को हिला कर ऐसा अनर्थ करने से मना कर रही है, ऐसा हदृय स्पर्शी दृश्य वस्तुतः अन्यत्र सर्वथा दुर्लभ है–

गुरोर्नियोगाद्वनिता वनान्ते साध्वीं सुमित्रा तनयो विहास्यन्।
अवार्यतेवोत्थितवीचिहस्तैर्जह्नोर्दुहित्रास्थितया पुरस्तात्।।[76]

इसी प्रकार काव्यकार की गंगा के प्रति श्रृद्धा भावना को वापस अयोध्या लौटने के अवसर पर भी अभिव्यक्ति प्राप्त हुई है, क्योंकि मार्ग में जहाँ एक ओर पश्चिम की ओर उलटी बहने वाली गंगा पर हाथियों के पुल का निर्माण करके कुश सेना सहित उसे पार करते हैं, वहीं दूसरी ओर वे चंचल तरंगों वाली गंगा को प्रणाम कराना नहीं भूलते हैं, क्योंकि वे इस तथ्य से भली भाँति परिचित प्रतीत होते हैं कि इसी गंगा की कृपा से कपिल के कोप से दग्ध हुए उनके पूर्वज सगर के पुत्रों को स्वर्ग की प्राप्ति हुई थी–

स पूर्वजानां कपिलेन रोषाद्भस्मावशेषीकृत विगहाणाम्।
सुराऽलयप्राप्तिनिमित्तमम्भस्त्रैस्रोतसं नौ लुलितं ववन्दे।।[77]

इसके अतिरिक्त कुमार सम्भव महाकाव्य के दशम सर्ग में काव्यकार की गंगा के प्रति अगाध आस्था की अभिव्यक्ति और भी अधिक प्रशंसनीय कही जा सकती है। जहाँ शिव के वीर्य से भयंकर पीड़ा को धारण करने वाले अग्नि को गंगा स्नान से ही शान्ति प्राप्त हुई है। इसी अवसर पर काव्यकार द्वारा प्रकट किए गए उद्‌गार वस्तुतः उनकी गंगा के प्रति श्रृद्धा भावना को सटीक अभिव्यक्ति प्रदान करते है।

क्योंकि इस अवसर पर काव्यकार ने चार श्लोकों में गंगा को सभी दुःखों को मिटाने वाली, भक्तों के लिए स्वर्ग की सीढ़ी, मोक्ष दात्री, पाप हारिणी, कष्ट निवारिणी, स्वर्ग तरंगिणी, धर्म धारिणी, सगर के पुत्रों को तारने वाली, विष्णु के पैर से उत्पन्न, ब्रह्म लोक से आने वाली, शिव की जल मयी मूर्ति एवं अपनी तीनों धाराओं से तीनों ही लोकों को सदैव पवित्र करने वाली बताया है।[78]

अग्नि को देखकर इस अवसर पर भी गंगा अपना ममत्व प्रदर्शित करती है, क्योंकि यहाँ भी वह अपने लहरों रूपी हाथों को उठाकर मानो दूर से ही अग्नि को अपने पास बुला रही है–

जातवेदसमायान्तमूर्मिहस्तैः समुत्थितैः।
आजुहावार्थसिद्धय तं सुप्रसादधरेव सा।[79]

इसी प्रसंग में काव्यकार ने गंगा के राज हंसों की ध्वनि में भी अपनी श्रृद्धा के कारण परोपकार एवं कष्टहरण रूप भावना के दर्शन किए हैं।[80] साथ ही ऊँची उठती ढलुए तट पर आगे बढ़ती तरंगों में देव कार्य करने वाले अग्नि के स्वागत करने की सुन्दर परिकल्पना भी की है[81] और अन्त में कल्याण कारिणी, श्रम हारिणी, पुण्य भारिणि, तारिणि गंगा के जल में डुबकी लगाकर अग्नि देव को भी असीम सुख प्रदान कराया है–

गंगावरिणि कल्याण कारिणि श्रमहारिणि।
स मग्नो निर्वृत्तिं प्राप पुण्यभारिणि तारिणि।[82]

तत्पश्चात् माघ माह में छहों कृत्तिकाओं के स्नान के लिए गंगा तट पर आगमन,[83] स्वर्ग में रहने वाले देवों द्वारा भी गंगा के दर्शन, स्नान और आचमन आदि का कथन करना,[84] स्नान के उपरान्त ऋषि मुनियों द्वारा तट पर पूजा की सामग्री– फूल, दूब, अक्षत आदि का मन भावन चित्रण[85] तथा इसी गंगा के तट पर ऋषि, मुनि एवं योगियों द्वारा पद्‌मासन लगाकर परम ब्रह्म का ध्यान करना,[86] ऐसी दिव्य गंगा नदी को कृत्तिकाओं द्वारा प्रणाम कराना आदि सभी क्रियाएँ काव्यकार की गंगा के प्रति अगाध श्रृद्धा, भक्ति एवं प्रेम की परिचायक कही जा सकती हैं, जो हमें नाटककार कालिदास में सर्वथा दृष्टिगोचर नहीं होती है।

इसी प्रकार काव्यकार की गंगा के प्रति आस्था की प्रतीति हमें उस अवसर पर भी होती है, जब वे गंगा के दर्शन मात्र से ही परम पुण्य की प्राप्ति का कथन करते हुए कहते हैं कि– जिस गंगा को स्वयं भगवान् शंकर ने अपने मस्तक पर धारण किया, जिनके दर्शन मात्र से परम पुण्य की प्राप्ति होती है, उन गंगा जी को देखकर कृत्तिकाओं के मन में परम श्रृद्धा ने प्रवेश किया[87] और उन्होंने मुक्ति प्रदान करने वाली, पुण्य सलिला, पाप नाशिनी, गंगा की अत्यन्त भक्तिभाव से वन्दना की।[88]

उल्लेखनीय तथ्य यह भी है कि काव्यकार की मान्यता तो इस सम्बन्ध में यहाँ तक है कि गंगा का दर्शन व्यक्ति के सौभाग्य का सूचक है, जो वस्तुतः उसे मोक्ष प्रदान कराने के समान है।[89] अतः पूर्व जन्म के पुण्य कर्मों के फल स्वरूप ही लोग इस गंगा में स्नान के अवसर को प्राप्त करते

https://doi.org/10.31995/shodhmanthan.2026.v17i02.026

हैं। यही कारण है कि कृत्तिकाओं ने भी गंगा जल में स्नान के पश्चात् चरम आनन्द की प्राप्ति की तथा अपने भाग्यों की सराहना की,[90] क्योंकि गंगा जल में स्नान करते हुए कृत्तिकाओं को मोक्ष प्राप्ति की ही अनुभूति हो रही थी।[91]

उपसंहार

उपर्युक्त संक्षिप्त विवरण से स्पष्ट है कि नाटककार कालिदास जहाँ केवल कुछ ही स्थलों पर[92] गंगादि नदियों का स्मरण मात्र करते हैं। वहीं काव्यकार अपनी तीनों ही कृतियों में गंगा के प्रति अपनी अगाध श्रृद्धा भावना एवं भक्ति का परिचय प्रदान करते हुए, उपमान रूप में तो उसके अनेकानेक प्रयोग करते ही हैं, साथ ही भाव विभोर होकर उसकी स्तुति में भी अनेक पद्यों की संरचना करते हैं।[93] यहाँ वे इसके लिए अनेक विशेषणों का प्रयोग करते हैं, जो उनके अन्तस्तल से श्रृद्धा पूर्वक निकले हुए भावों की अभिव्यक्ति ही प्रतीत होते हैं।

वस्तुतः गंगा के प्रति इस प्रकार की भावाभिव्यक्ति हमें अन्य किसी भी संस्कृत महाकवि में देखने को नहीं मिलती है। वस्तुस्थिति तो यह है कि गुप्तकाल में स्थित काव्यकार कालिदास गंगा के पौराणिक स्वरूप के प्रति अत्यन्त आस्थावान् रहे हैं। यही कारण है कि गंगा की स्तुति में हम भावभीनी पौराणिक शैली के दर्शन भी कर सकते हैं। इसके अतिरिक्त महत्त्वपूर्ण तथ्य यह भी है कि काव्यकार के गंगा विषयक इस प्रगाढ़ आस्था एवं प्रेम के आधार पर भी हम नाटककार कालिदास एवं काव्यकार कालिदास इन दोनों को भिन्न व्यक्तित्वों के रूप में स्पष्ट रूप से देख सकते हैं।

संदर्भ

1. ऋ.– 6/45/31, 10/75/5।
2. शतपथ ब्राह्मण– 13/5/4/11।
3. जैमिनि ब्राह्मण– 3/183।
4. तैत्तिरीय आरण्यक– 2/10।
5. वाल्मीकि रामायण, किष्किन्धा काण्ड– 40/20।
6. महा.–आदि. 67/74, 96/4–8, 9–12।
7. गंगारोधः पतनकुलशा गच्छतीव प्रसादम्। विक्रमो–1/9। हिमवति जलधौ च व्यस्ततोयेव गंगा। विक्रमो–4/53
8. रघु.–13/58।
9. मेघ.– 1/54, रघु.– 6/85 , 8/95, 10/26, 69, 14/51।
10. रघु.– 7/36, कु.– 1/15।
11. कुमारसंभवं– 1/30, 54, 6/38, 70, रघु.– 2/26, 4/36, 73, 6/48, 13/57, 14/3, 52, 16/33, मेघ.– 1/67।
12. कु.– 10/24।
13. कु.– 10/26।
14. कु.– 10/26,11/1।

15. कु.— 10 / 28 ।
16. कु.— 10 / 34 ।
17. कु.— 10 / 36 ।
18. कु.— 10 / 40 ।
19. कु.— 11 / 7, 17 ।
20. कु.— 11 / 12 ।
21. कु.— 11 / 24 ।
22. कु.— 11 / 26 ।
23. कु.— 13 / 30 ।
24. शाकु.—1 / 24 , विक्रमो.— 4 / 53 ।
25. माल.— 5 / 15 से पूर्व ।
26. शाकु.— 1 / 13 से पूर्व, 3 / 5, 6, 4 / 15, 6 / 17 ।
27. माल.— 5 / 1, 13 ।
28. आकाश गंगा — विक्रमो.— 4 / 2 के बाद ।
29. मेघ.— 1 / 31 ।
30. मेघ.— 1 / 49 ।
31. मेघ.— 1 / 25 ।
32. मेघ.— 1 / 29 ।
33. मेघ.— 1 / 33 ।
34. मेघ.— 1 / 37 ।
35. मेघ.— 1 / 44 ।
36. मेघ.— 1 / 20 ।
37. मेघ.— 1 / 53 ।
38. रघु.— 8 / 95 ।
39. रघु.— 4 / 67 ।
40. रघु.— 7 / 36 ।
41. रघु.— 4 / 81 ।
42. रघु.— 13 / 34 ।
43. रघु.— 4 / 46 ।
44. रघु.— 4 / 50 ।
45. रघु.— 4 / 55 ।
46. रघु.— 4 / 38 ।

https://doi.org/10.31995/shodhmanthan.2026.v17i02.026

47. रघु.— 9 / 20,72, 12 / 76, 14 / 76 ।
48. रघु.— 4 / 67 ।
49. रघु.— 16 / 31 ।
50. कु— 5 / 85 ।
51. रघु.— 6 / 52 ।
52. रघु.— 7 / 36 ।
53. रघु.— 8 / 8, 9 / 17 ।
54. शाकु.— 2 / 17 ।
55. विक्रमो.— 3 / 8 ।
56. रघु.— 8 / 95 ।
57. रघु.— 13 / 54—57 ।
58. रघु.— 7 / 36 ।
59. गंगाप्रपातान्तविरूढशृपं गौरीगुरोर्गह्वरमाविवेश ।। रघु.— 2 / 26 ।
60. कु.—6 / 38 ।
61. मेघ.— 1 / 67 ।
62. रघु.— 4 / 73 ।
63. रघु.— 6 / 48 ।
64. रघु.— 6 / 85 ।
65. रघु.— 7 / 36 ।
66. रघु.— 10 / 26 ।
67. रघु.— 10 / 69 ।
68. रघु.— 13 / 51—58 ।
69. रघु.— 13 / 51 ।
70. रघु.— 13 / 54 ।
71. रघु.— 13 / 55 ।
72. रघु.— 13 / 56 ।
73. रघु.— 13 / 57 ।
74. रघु.— 13 / 58 ।
75. रघु.— 14 / 3 ।
76. रघु.— 14 / 51 ।
77. रघु.— 16 / 34 ।
78. कु.— 10 / 22—31 ।

79. कु.— 10/32।
80. कु.— 10/33।
81. कु.— 10/34।
82. कु.— 10/36।
83. कु.— 10/43।
84. कु.— 10/44।
85. कु.— 10/45।
86. कु.— 10/46—47।
87. कु.— 10/49।
88. कु.— 10/50।
89. कु.—10/51।
90. कु.— 10/53।
91. कु.— 10/52।
92. शाकु.— 1/13 से पूर्व, 1/24 , 3/5, 6, 4/15, 6/17 , विक्रमो.— 4/2 के बाद, 4/53। माल.— 5/1, 13 , 5/15 से पूर्व।
93. कु.— 10/28—31।